अंतरराष्ट्रीय और भारतीय परिप्रेक्ष्य में बासेल-III: दस प्रश्न जिनका उत्तर हमें जानना चाहिए *

दुव्वुरी सुब्बाराव

यह मेरे लिए गौरव की बात है कि लगातार चौथे वर्ष आपने मुझे इस वार्षिक फिक्की-आईबीए सम्मेलन का उद्घाटन करने का अवसर प्रदान किया है। चूंकि कॉरपोरेट और बैंकिंग क्षेत्र के प्रमुख लोग इसमें शामिल होते हैं, अतः यह सम्मेलन प्रमुख नीतिगत मुद्दों पर चर्चा करने का एक महत्त्वपूर्ण मंच के रूप में उभरकर आया है। इसलिए मैं इस मंच पर अपने विचार व्यक्त करना अति महत्त्वपूर्ण समझता हूँ। इस अवसर के लिए मैं शुक्रगुज़ार हूँ।

2. इस महीने के अंत में लीमैन ब्रदर्स के पतन की अविस्मरणीय घटना को घटे चार वर्ष पूरे हो जाएंगे। इस घटना को हमारी पीढ़ी का सबसे बड़ा वित्तीय संकट पैदा करने का कारण माना जाता है। चार वर्ष बीत गए, लेकिन संकट ने हमारा पीछा नहीं छोड़ा है। केवल भौगोलिक क्षेत्र और मुख्य-मुख्य कारकों में कुछ बदलाव आया है। दुनिया का कोई भी देश इसके चंगुल से अब तक नहीं बच पाया है तथा वैश्विक संवृद्धि और खुशहाली पर इसका बुरा असर अब भी जारी है।

3. बैंक और बैंकर इस संकट का प्रमुख शिकार बने। इसके परिणामस्वरूप संकटोत्तर नीतिगत सुधारों में बैंकिंग क्षेत्र की सुरक्षा और स्थिरता पर बल दिया जा रहा है। इस सुधार के अधिकांश उपाय अभी प्रक्रियाधीन है, परंतु इसके एक अंश को अंतिम रूप दिया जा चुका है। वह है बैंकिंग पूंजी के विनियमन संबंधी बासेल-III ढांचा। इसके अंतिम पैकेज को जी-20 ने स्वीकृति दे दी है और इसकी शुरुआत कर दी गई है। भारत में हमने सभी स्टेकहोल्डरों के साथ व्यापक रूप से परामर्श करके मई 2012 में पूंजीगत विनियमन संबंधी बासेल-III दिशा-निर्देश जारी किए हैं।

4. मैं दो वर्ष पहले, यानि कि 2010 की घटना की याद दिलाना चाहता हूँ, जब मैंने इस सम्मेलन में बासेल-III पैकेज के प्रति भारत के दृष्टिकोण पर चर्चा की थी। तब तक बासेल-III को अंतिम रूप दिया जा रहा था। अब हम शीघ्र ही इसके कार्यान्वयन की अवस्था में प्रवेश करने वाले हैं, इसलिए मैंने यह उचित समझा कि इस मुद्दे पर पुनः विचार-विमर्श करूँ और बासेल-III में अंतर्निहित कुछ संकल्पनात्मक एवं कार्यान्वयन संबंधी मुद्दों को संबोधित कर इस सम्मेलन को और सार्थक बनाऊँ। मैं विशेष रूप से दस प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास करूंगा।

* दिनांक 04 सितंबर 2012 को मुंबई में आयोजित वार्षिक फिक्की - आईबीए बैंकिंग सम्मेलन में भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर डॉ. दुव्वुरी सुब्बाराव का उद्घाटन भाषण।

पहला प्रश्न : माना जाता है कि वास्तव में बासेल-II के जोखिम के प्रति संवेदनशील ढांचे ने संकट को जन्म दिया है। क्या यह विचार सही है?

5. इस प्रश्न का उत्तर दो-चार शब्दों में नहीं दिया जा सकता। यदि मुझे संक्षेप में उत्तर देना है तो मैं कहूँगा कि यह विचार सही है, किंतु कुछ हद तक ही। इस मुद्दे पर प्रकाश डालना चाहूँगा।

6. बासेल-। से बासेल-II में क्या खास रूपांतरण हुआ? खास रूपांतरण यह था कि बासेल-। में 'वन-साइज़-फिट-आल' वाला दृष्टिकोण अपनाया गया, जबकि बासेल-II में जोखिम के प्रति संवेदनशील पूंजी विनियमन की अवधारणा शुरू की गई। बासेल-II पर यह इलज़ाम लगाया जाता है कि जोखिम के प्रति इसकी संवेदनशीलता ने ही इसे अंधाधुंध तरीके से प्रतिचक्रीय बना दिया है। अच्छे समय में जब बैंकों का संचालन ठीक-ठाक चल रहा होता है और बाज़ार उनमें पूंजी निवेश करने के लिए तैयार रहता है तो बासेल-II बैंकों पर पूंजी की अतिरिक्त अपेक्षा नहीं थोपता है। इसके विपरीत, दबाव की स्थिति में जब बैंकों को अतिरिक्त पूंजी की आवश्यकता होती है और बाज़ार से उन्हें निरंतर पूंजी मिलने में दिक्कत होती है तब बासेल-II बैंकों को और पूंजी लाने के लिए विवश करता है। जैसा कि हमने संकट के दौरान देखा है प्रमुख अंतरराष्ट्रीय बैंक दबावग्रस्त होकर पूंजी लाने की स्थिति में नहीं रहे जिससे वे डिलीवरेज के दुश्चक्र में फंस गए। इसकी वजह से वैश्विक वित्तीय बाज़ार ठप्प हो गए और दुनिया की कई अर्थव्यवस्थाएं मंदी की चपेट में आ गईं।

7. बासेल-II पर दूसरा इलज़ाम लगाया गया कि उसने पूंजीगत विनियमन को जोखिम के प्रति और संवेदनशील बना तो दिया है, लेकिन वह बाज़ार के बदलते रुख के अनुरूप विनियामक पूंजी की परिभाषा और संरचना में अपेक्षित परिवर्तन करने से चूक गया। बाज़ार जोखिम मॉडल चूक गए, विशेष रूप से वे कुछ ऐसे जटिल डेरिवेटिव उत्पादों से पैदा होने वाले जोखिमों को शामिल करने से चूक गए जो बाज़ार में बड़े पैमाने पर प्रवेश कर रहे थे। ये मॉडल यह मानकर ट्रेडिंग बही एक्सपोज़रों के लिए पूंजी लाने की कम मांग कर रहे थे कि ट्रेडिंग बही एक्सपोज़रों को आसानी से बेचा जा सकता है और पोजिशनों को शीघ्र निपटाया जा सकता है। इससे बैंक गुमराह होकर गलत रास्ते पर चल पड़े, अर्थात् उन्होंने पूंजी पाने के लिए

अपने बैंकिंग बही एक्सपोज़रों को ट्रेडिंग बही में पार्क करना शुरू कर दिया। जैसा कि हम सब जानते हैं इस प्रकार की अधिकतर नुकसानदेह आस्तियों और उनके प्रतिभूतीकृत डेरिवेटिवों, जिन्होंने संकट के बीज बोए थे, को ट्रेडिंग बही में पार्क किया गया था।

8. इस प्रकार, बासेल-II पर यह दूसरा दोष लगाया गया कि जोखिम के प्रति संवेदनशील रहने के बावजूद उसने ऐसे किसी मॉडलिंग ढांचे को बढ़ावा नहीं दिया है जो जोखिम को सटीकता से माप सकता हो। साथ ही, यह जोखिम को कम करने की दृष्टि से पर्याप्त मात्रा में हानि से बचाने वाली पूंजी की मांग करने से चूक गया।

9. बासेल-II के खिलाफ तीसरा इलज़ाम है लीवरेज की आशंकाएं। गौरतलब है कि बासेल-II में लीवरेज के नियंत्रण के संबंध में किसी विनियमन का स्पष्ट उल्लेख नहीं था। उसमें यह अवधारणा थी कि जोखिम आधारित पूंजी की अपेक्षाओं से बेशी लीवरेज का जोखिम खुद-ब-खुद मिट जाएगा। यह अवधारणा गलत निकली क्योंकि बैंकों का बेशी लीवरेज ही संकट का प्रमुख कारण बना। इसी तरह बासेल-II में चलनिधि जोखिम का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं है। चूंकि चलनिधि जोखिम को अनदेखा करने से सॉल्वेन्सी जोखिम पैदा हो सकता है, अतः वास्तव में जो बैंक संकट के दबदबे में आया वह ध्वस्त हो गया।

10. अंत में बासेल-II पर दोष लगाया गया कि उसने वित्तीय संस्था-विशेष पर ध्यान केंद्रित किया है, जबकि विभिन्न प्रकार की वित्तीय संस्थाओं के बीच अंतरसंबद्धता से पैदा होने वाले प्रणालीगत जोखिम को उसने नज़रअंदाज़ कर दिया। बाद में हमें यह पता चला कि इस वजह से विभिन्न वित्तीय बाज़ारों में विध्वंसकारी संकट फैल गया।

11. क्या बासेल-II पर की जाने वाली ये सारी आलोचनाएं सही हैं? जैसा कि मैं पहले बता चुका हूँ कुछ हद तक ये आलोचनाएं सही हैं। ज्ञात हो कि बासेल-II को जून 2006 में लागू किया गया और जब अगस्त 2007 में संकट के बादल छाने लगे तब इसे लागू करने का कार्य ज़ोरों से हो रहा था। यह संभव है कि बासेल-II के बाज़ार जोखिम ढांचे की विफलता ने संकट को बढ़ावा दिया होगा, लेकिन बासेल-II की जोखिम संवेदनशीलता ने संकट को जन्म दिया है, ऐसा दावा करना अतिशयोक्ति होगी।

दूसरा प्रश्न : बासेल-II की तुलना में बासेल-III में क्या सुधार किया गया है?

12. बासेल-II में सामने आई कमियों व खामियों को दूर करने और संकट से मिले अन्य सबकों को बासेल-III में उजागर करने की चेष्टा की गई है। मगर खास बात यह है कि बासेल-II ने बासेल-III को पूरी तरह दरकिनार नहीं किया है; इसके विपरीत, इसमें बासेल-II का निचोड़ है - प्रत्येक बैंक के जोखिम प्रोफाइल और पूंजी अपेक्षाओं के बीच के संबंध का। उस मायने में बासेल-III बासेल-II का खंडन नहीं, अपितु वह उसका उन्नत रूप है।

13. बासेल-II की तुलना में बासेल-III में मुख्य रूप से निम्नलिखित क्षेत्रों को जोड़ा गया है: (i) पूंजी के स्तर और गुणवत्ता को बढ़ाना; (ii) चलनिधि के मानकों की शुरुआत; (iii) प्रावधानीकरण के मानदंडों में बदलाव; और (iv) बेहतर एवं अपेक्षाकृत और व्यापक प्रकटीकरण। मैं इनमें से हरेक मद पर संक्षेप में चर्चा करूँगा।

पूंजी की उच्चतर अपेक्षा

14. सारणी-1 में दर्शाए गए तुलनात्मक आंकड़ों से यह पता चलता है कि बासेल-III में उच्चतर व बेहतर गुणवत्ता वाली पूंजी की अपेक्षा की गई है। न्यूनतम कुल पूंजी के स्तर में कोई बदलाव नहीं किया गया है, जिसे जोखिम भारित आस्तियों (आरडब्ल्यूए) के 8 प्रतिशत के बराबर बनाए रखा गया है। तथापि, बासेल-III में न्यूनतम पूंजी की अपेक्षा के अलावा, आरडब्ल्यूए के 2.5 प्रतिशत के बराबर के पूंजी संरक्षण बफ़र को प्रारंभ किया गया है। इससे कुल पूंजी की अपेक्षा 10.5 प्रतिशत पर चली गई, जबकि बासेल-II में 8.0 प्रतिशत की अपेक्षा की जाती है। इस बफ़र के पीछे यह आशय है कि बैंक न्यूनतम पूंजी की अपेक्षा को पूरा करने के साथ-साथ हानि का वहन करने में भी समर्थ हो सकें, और वे मंदी के दौर में डिलीवरेज किए बिना अपने कारोबार को चलाने में समर्थ बन सकें। यह बफ़र न्यूनतम विनियामक अपेक्षा का अंग नहीं बनता, किंतु इस बफ़र के स्तर को ध्यान में रखते हुए शेयरधारकों को दिए जाने वाले लाभांश और स्टाफ सदस्यों को अदा किए जाने वाले बोनस की राशि निर्धारित की जाएगी।

सारणी 1: बासेल-II और बासेल-III के अंतर्गत अपेक्षित पूंजी

		जोखिम भारित आस्तियों के प्रतिशत के रूप में	
		बासेल II	बासेल III (1 जनवरी 2019 की स्थिति के अनुसार)
क = (ख+घ)	न्यूनतम कुल पूंजी	8.0	8.0
ख	न्यूनतम टियर-1 पूंजी	4.0	6.0
ग	जिसमें से: न्यूनतम सामान्य इक्विटी टियर-1 पूंजी	2.0[1]	4.5
घ	अधिकतम टियर-2 पूंजी (कुल पूंजी के अंतर्गत)	4.0	2.0
ङ	पूंजी संरक्षण बफ़र (सीसीबी)	-	2.5
च = ग+ङ	न्यूनतम सामान्य इक्विटी टियर-1 पूंजी+सीसीबी	2.0	7.0
छ = क+ङ	न्यूनतम कुल पूंजी+सीसीबी	8.0	10.5

[1] बासेल II में न्यूनतम सामान्य इक्विटी टियर-1 पूंजी के संबंध में स्पष्ट रूप से कोई उल्लेख नहीं है। आम तौर पर यह माना जाता है कि सामान्य इक्विटी टियर-1 पूंजी का प्रमुख भाग अर्थात् 50 प्रतिशत हो।

15. न्यूनतम कुल पूंजी की अपेक्षा के अंतर्गत भी पूंजी की गुणवत्ता की कई शर्तें लगाई गई हैं ताकि वह पूंजी हानि की भरपाई करने में काम आए, और करदाताओं पर बेल आउट का बोझ लादने का उपाय सबसे अंतिम उपाय हो।

16. बासेल-III में पूंजी संरक्षण बफ़र के अलावा एक और पूंजी बफ़र की शुरुआत की गई है - जो कि प्रति-चक्रीय पूंजी बफ़र कहलाता है - जिसका दायरा 0-2.5 प्रतिशत के बीच है। ऋण में अत्यधिक वृद्धि होने की दशा में बैंकों पर इसे लागू किया जा सकता है। साथ ही, प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण बैंकों पर उच्चतर पूंजी अधिभार लगाने का प्रावधान भी है।

17. बैंकों द्वारा अत्यधिक लीवरेज बढ़ाने के जोखिम, जैसा कि बासेल-II के अंतर्गत पैदा हुआ था, को रोकने के अंतिम उपाय के तौर पर बासेल-III में जोखिम पूंजी अपेक्षा आधारित एक लीवरेज अनुपात विनिर्दिष्ट किया गया है। बासेल समिति 3 प्रतिशत (33.3 गुना) के न्यूनतम टियर-1 लीवरेज अनुपात की शुरुआत करने पर विचार कर रही है जो कि 1 जनवरी 2018 को स्तंभ-1 अपेक्षा के रूप में परिणत हो जाएगा।

18. जैसा कि हमने पहले चर्चा की थी, बाज़ार जोखिम से निपटने की दृष्टि से हानि की भरपाई करने हेतु पर्याप्त मात्रा में पूंजी की मांग रखने से बासेल-II चूक गया। इस स्थिति से निपटने के लिए बासेल-III में बाज़ार जोखिम लिखतों में प्रतिपक्षी क्रेडिट जोखिम ढांचे को मज़बूत किया गया है। इसके अंतर्गत प्रतिपक्षी क्रेडिट चूक जोखिम के संबंध में पूंजी अपेक्षा निर्धारित करने के लिए दबावग्रस्त निविष्टि मानदंडों का प्रयोग शामिल है। इसके अलावा, बैंकों को प्रतिपक्षी क्रेडिट गुणवत्ता में गिरावट के जोखिम से निपटने के लिए ओटीसी डेरिवेटिवों के लिए सीवीए (क्रेडिट मूल्यांकन समायोजन) जोखिम पूंजी प्रभार नामक एक और पूंजी अपेक्षा विनिर्दिष्ट की गई है।

19. चलनिधि जोखिम को कम करने के लिए बासेल-III में बैंकों के तुलन-पत्रों में संभावित अल्पावधिक चलनिधिजन्य दबाव और दीर्घावधिक संरचनागत चलनिधिजन्य दबाव दोनों को दूर करने पर ज़ोर दिया गया है (सारणी-2)। अल्पावधिक चलनिधिजन्य दबाव का सामने करने के लिए बैंकों को उच्च-स्तरीय भार-रहित चलनिधिगत आस्तियों को पर्याप्त मात्रा में बनाए रखना होगा ताकि वे 30-दिन की अवधि, जैसा कि चलनिधि कवरेज अनुपात (एलसीआर) द्वारा मापा जाता है, में निधीयन से पैदा होने वाले दबाव की स्थिति से निपटने में समर्थ हो सकें। दीर्घावधि में चलनिधिगत अंतरों को कम करने की दृष्टि से बैंकों को अनिवार्य रूप से एक निवल स्थिर निधीयन अनुपात (एनएसएफआर) बनाए रखना होगा। एनएसएफआर के अंतर्गत आस्तियों के चलनिधिगत स्वरूप के आधार पर तथा एक वर्ष की अवधि के लिए तुलन-पत्रेतर प्रतिबद्धताओं से पैदा होने वाली संभावित आकस्मिक चलनिधिजन्य मांगों के अनुसार निधीयन के स्थिर स्रोतों की न्यूनतम मात्रा विनिर्दिष्ट की गई है। सार रूप में एनएसएफआर का लक्ष्य निधीयन के स्थिर स्रोतों का लाभ उठाने के लिए बैंकों को प्रोत्साहित करना है।

चलनिधि के मानक

सारणी-2 : चलनिधि के मानक

अनुपात	बासेल-II	बासेल-III
चलनिधि कवरेज अनुपात (एलसीआर) *(1 जनवरी 2015 से लागू किया जाना है)*	–	उच्च स्तरीय चलनिधिगत आस्तियां≥ 100 प्रतिशत अगले 30 कैलेंडर दिवसों में कुल निवल बहिर्गत राशि
निवल स्थिर निधीयन अनुपात (एनएसएफआर) *(1 जनवरी 2018 से लागू किया जाना है)*	–	स्थिर निधीयन की उपलब्ध मात्रा> 100 प्रतिशत स्थिर निधीयन की अपेक्षित मात्रा

प्रावधानीकरण के मानदंड

20. बासेल समिति प्रावधानीकरण के 'प्रत्याशित हानि' पर आधारित ऐसे उपाय को अपनाने के प्रस्ताव का समर्थन कर रही है जिसके माध्यम से वास्तविक हानि की पहचान अपेक्षाकृत अधिक पारदर्शिता के साथ की जा सके। साथ ही, मौजूदा 'उपगत हानि (incurred loss)' दृष्टिकोण की तुलना में इसमें प्रतिचक्रीयता का स्वरूप कम हो। प्रावधानीकरण संबंधी प्रत्याशित हानि दृष्टिकोण सभी स्टेकहोल्डरों, जिनमें विनियामक और पर्यवेक्षक शामिल हैं, के लिए वित्तीय रिपोर्टिंग को और उपयोगी बना देगा।

प्रकटीकरण की अपेक्षाएं

21. बैंकों द्वारा किए जाने वाले प्रकटीकरण से बाज़ार के सहभागियों को सोच समझकर कदम उठाने में सहायता मिलती है। हाल ही के संकट से यह भी सबक मिला कि बैंकों द्वारा अपने जोखिम वाले एक्सपोज़रों और विनियामक पूंजी के संबंध में किए गए प्रकटीकरण तुलनात्मक विश्लेषण की दृष्टि से न तो ठीक थे न ही पर्याप्त रूप में पारदर्शी। इस स्थिति से निपटने के लिए बासेल-III में सभी संबंधित ब्योरे को प्रकट करने की अपेक्षा की जाती है। जहाँ तक बैंक की विनियामक पूंजी की संरचना का संबंध है विनियामक समायोजन भी इस प्रकटीकरण के अंतर्गत शामिल है।

तीसरा प्रश्न : बासेल-III का पालन करने के लिए बैंकों को और कितनी पूंजी जुटानी पड़ेगी? पूंजी के आकार को बढ़ाने के लिए क्या-क्या विकल्प मौजूद हैं और इस कार्य में क्या-क्या चुनौतियां पैदा हो सकती हैं?

22. माना कि भारतीय बैंक बासेल-III की न्यूनतम पूंजी अपेक्षाओं को समग्र रूप से पहले ही पूरा कर चुके हैं, फिर भी कुछ बैंकों ने इसे वैयक्तिक स्तर पर पूरा नहीं किया है। किंतु आज पूंजी पर्याप्तता

को हासिल करने का मतलब यह नहीं कि आगे भी यही अनुकूल स्थिति बनी रहेगी। वर्तमान में भारत का बैंक ऋण - जीडीपी का अनुपात 55 प्रतिशत है। यदि हम संवृद्धि को बढ़ाना चाहते हैं तो इस अनुपात को बढ़ाना एक आवश्यक पूर्व-शर्त है। इसके अलावा, हमारी अर्थव्यवस्था एक संरचनात्मक कायापलट के दौर से गुज़र रही है, ऐसा होने से औद्योगिक क्षेत्र की हिस्सेदारी बढ़ेगी और ऋण-जीडीपी अनुपात में और बढ़ोतरी होगी। तात्पर्य यह है कि भारतीय बैंकों को बासेल-III के न रहने की स्थिति में भी अतिरिक्त पूंजी जुटानी होगी। बासेल-III से बढ़ने वाले निवल अतिरिक्त बोझ का आकलन करते समय इस बात को भी ध्यान में रखना होगा।

23. भारतीय बैंकों को कितनी अतिरिक्त पूंजी लानी पड़ेगी? यह इस संबंध में किए जाने वाले अनुमानों पर निर्भर करता है और इस बारे में कई प्रकार के आकलन किए जा रहे हैं। रिज़र्व बैंक ने 31 मार्च 2018 तक की अवधि को शामिल करके निम्नलिखित दो संतुलित अनुमानों के आधार पर कतिपय त्वरित आकलन तैयार किए हैं : (i) प्रत्येक बैंक की जोखिम भारित आस्तियों में प्रति वर्ष 20 प्रतिशत की बढ़ोतरी होगी; तथा (ii) आंतरिक उपचित राशियां जोखिम भारित आस्तियों के 1 प्रतिशत के बराबर होंगी।

24. रिज़र्व बैंक के अनुमान के अनुसार ₹5 ट्रिलियन की अतिरिक्त पूंजी की अपेक्षा का आकलन किया गया है, जिसमें ₹3.25 ट्रिलियन की राशि गैर-इक्विटी पूंजी की होगी, वहीं इक्विटी पूंजी का हिस्सा ₹1.75 ट्रिलियन का होगा (सारणी-3)।

सारणी 3 : बासेल-III के अंतर्गत भारतीय बैंकों के लिए अपेक्षित अतिरिक्त[2] सामान्य इक्विटी

(बिलियन ₹)

	सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक	निजी क्षेत्र के बैंक	कुल
क बासेल-III के अंतर्गत अपेक्षित अतिरिक्त इक्विटी पूंजी	1400-1500	200-250	1600-1750
ख बासेल-II के अंतर्गत अपेक्षित अतिरिक्त इक्विटी पूंजी	650-700	20-25	670-725
ग बासेल-III के अंतर्गत अपेक्षित निवल इक्विटी पूंजी (क-ख)	750-800	180-225	930-1025
घ सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए बासेल-III के अंतर्गत अपेक्षित अतिरिक्त इक्विटी पूंजी (क) में से			
सरकार का हिस्सा (हिस्सेदारी का मौजूदा ढांचा बने रहने की स्थिति में)	880-910	-	-
सरकार का हिस्सा (हिस्सेदारी को 51 प्रतिशत तक लाने की स्थिति में)	660-690	-	-
बाज़ार का हिस्सा (सरकार की हिस्सेदारी का ढांचा मौजूदा स्तर पर बने रहने की स्थिति में)	520-590	-	-

[2] आंतरिक उपचित राशियों के अतिरिक्त

25. अतिरिक्त इक्विटी पूंजी की अपेक्षा ₹1.75 ट्रिलियन हो जाने के मामले में दो सवाल उठ खड़े होते हैं। पहला, क्या बाज़ार इतनी बड़ी राशि मुहैया कर पाएगा? दूसरा, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को पूंजी उपलब्ध कराने के लिए सरकार पर कितना बोझ पड़ेगा और इसके लिए किन-किन विकल्पों को काम में लाया जा सकता है?

26. अब हम पहले सवाल पर आते हैं, क्या बाज़ार इतनी बड़ी इक्विटी पूंजी मुहैया कर पाएगा। बाज़ार को कितनी राशि मुहैया करानी है यह तो इस बात पर निर्भर करेगा कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को नए सिरे से पूंजी उपलब्ध कराने में सरकार कितना बोझ उठा पाएगी। सारणी-3 के आंकड़ों से पता चलता है कि बाज़ार को ₹700 बिलियन से ₹1 ट्रिलियन के दायरे में राशि उपलब्ध करानी होगी, जो कि सरकार द्वारा उपलब्ध करा सकने वाली राशि पर निर्भर रहेगा। पिछले पांच वर्ष के दौरान बैंकों ने प्राथमिक बाज़ारों के माध्यम से ₹520 बिलियन की इक्विटी पूंजी जुटाई है। अगले पांच वर्षों में ₹700 बिलियन से ₹1 ट्रिलियन की राशि बाज़ार से जुटाना कोई असंभव सी बात नहीं लगती। पूरी तरह बासेल-III को लागू करने के लिए पांच वर्ष की अतिरिक्त अवधि रहने के कारण बैंकों के पास अपनी पूंजी जुटाने की कार्य-योजना तैयार करने के लिए पर्याप्त समय है।

27. अब दूसरा सवाल है सरकार, जिसके पास बैंकिंग प्रणाली की 70 प्रतिशत की हिस्सेदारी है, कितना बोझ उठा पाएगी। यदि सरकार अपनी हिस्सेदारी के मौजूदा स्तर को बनाए रखना चाहती है तो उसे पुनःपूंजीकरण के तौर पर ₹900 बिलियन का बोझ उठाना पड़ेगा। यदि वह प्रत्येक बैंक में अपनी हिस्सेदारी को 51 प्रतिशत के न्यूनतम स्तर पर लाने का निर्णय लेती है तो उस पर ₹700 बिलियन का बोझ आएगा।

28. इतनी बड़ी मात्रा में इक्विटी पूंजी मुहैया कराने से राजकोषीय बाधाएं पैदा हो सकती हैं, जिनसे काफी चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है। सरकार के लिए एक और लुभावना विकल्प मौजूद है, वह सामान्य इक्विटी उपलब्ध कराने के बजाय पुनःपूंजीकरण बांड जारी कर सकती है। परंतु इससे राजकोषीय पारदर्शिता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसके बदले, क्या सरकार सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में अपनी हिस्सेदारी को 51 प्रतिशत से कम करने के लिए तैयार हो जाएगी? यदि सरकार इस विकल्प को चुनती है तो सवाल यह उठता है कि क्या वह अपने बहुलांश मताधिकार को बनाए रखने के लिए कानून में बदलाव करेगी?

चौथा प्रश्न : क्या बासेल-III से संवृद्धि बाधित होगी?

29. बासेल-III के बारे में एक और महत्त्वपूर्ण आलोचना की जाती है कि उससे संवृद्धि बाधित हो जाएगी। हालाँकि संवृद्धि पर इसके प्रभाव को आंकने के लिए कोई सटीक मात्रात्मक आकलन पद्धति

हमारे पास नहीं है, फिर भी यह चिंता जताई जा रही है कि बासेल-III के अंतर्गत पूंजी की अपेक्षा ऐसी दशा में बढ़ जाएगी जब अर्थव्यवस्था में ऋण की मांग बढ़ रही हो।

30. संरचनागत रूप से कायापलट के दौर से गुज़रने वाली अर्थव्यवस्था, जिसमें काफी तेजी से सुधार होता हो, में कई कारणों से ऋण की मांग की गति जीडीपी की तुलना में काफी बढ़ जाएगी। पहला, भारत सेवा क्षेत्र की अपेक्षा विनिर्माण क्षेत्र की ओर प्रवण हो जाएगा तथा जीडीपी की प्रति इकाई की दृष्टि से देखा जाए तो विनिर्माण क्षेत्र की ऋण मात्रा सेवा क्षेत्र की ऋण मात्रा से अधिक रहती है। दूसरा, हमें बुनियादी क्षेत्र में अपने निवेश की मात्रा को कम-से-कम दुगुना करने की ज़रूरत है जिससे ऋण की मांग में काफी बढ़ोतरी होगी। आखिरी बात, वित्तीय समावेशन, जिस पर सरकार और रिज़र्व बैंक बड़े उत्साह से कार्य कर रहे हैं, के माध्यम से निम्न आय वर्ग के असंख्य परिवारों को औपचारिक वित्तीय प्रणाली के अंतर्गत लाया जाएगा। इनमें से अधिकांश परिवारों को ऋण की ज़रूरत है।

31. इन सबका मतलब यह है कि हम ऐसे समय में बासेल-III के अनुसार बैंकों पर अधिक पूंजी की अपेक्षा थोपने वाले हैं जब ऋण की मांग तेजी से बढ़ रही हो। इस पर एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि क्या इससे ऋण की लागत बढ़ेगी और उससे संवृद्धि बाधित हो जाएगी? या यूँ कहें कि वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए हम किस हद तक संवृद्धि का त्याग करने के लिए तैयार हैं? इस बात को लेकर तनाव का माहौल पैदा हो गया है कि एक ओर अल्पावधिक मज़बूरियों को झेलना है तो दूसरी ओर दीर्घावधिक संवृद्धि की संभावनाओं को किस प्रकार सफल बनाया जाए। बीआईएस के अर्थशास्त्रियों के प्रायोगिक अनुसंधान से यह पता चला है कि बासेल-III की वजह से अल्पवाधि के लिए कुछ अधिक लागत चुकानी पड़ सकती है, लेकिन इससे मध्यावधि से दीर्घावधि में संवृद्धि की संभावनाएं सुरक्षित रहेंगी।

पांचवां प्रश्न : बासेल-III बैंकों की लाभप्रदता को किस प्रकार प्रभावित करेगा? क्या इससे प्रोत्साहन संरचना में बदलाव आएगा?

32. मैं इसका उत्तर देने की चेष्टा करूँगा। जैसा कि हमने देखा कि बासेल-III के अंतर्गत अधिक मात्रा में और बेहतर गुणवत्ता की पूंजी की अपेक्षा की जाती है। यह तो विदित है कि इक्विटी पूंजी की लागत काफी अधिक होती है। हानि की भरपाई के संबंध में गैर-इक्विटी विनियामक पूंजी पर विनिर्दिष्ट अपेक्षाओं से भी लागत बढ़ जाने की संभावना है।

33. पिछले तीन वर्षों में भारतीय बैंकिंग प्रणाली की इक्विटी पर औसत प्रतिलाभ 15 प्रतिशत के आस-पास रहा। बासेल-III को लागू किए जाने से अल्पावधि में भारतीय बैंकों की इक्विटी का प्रतिलाभ कम होने की संभावना है। किंतु एक सुस्थिर और सुदृढ बैंकिंग प्रणाली साकार होने से जो लाभ मिलेगा उससे मध्यावधि से दीर्घावधि में इक्विटी के निम्नतर प्रतिलाभ का नकारात्मक प्रभाव काफी हद तक कम हो जाएगा। यह मानना ठीक होगा कि निवेशक कम जोखिम वाले और सुस्थिर बैंकों से मिलने वाले लाभों को ठीक तरह से समझेंगे और वे कम जोखिम पर अधिक प्रतिलाभ प्राप्त करना पसंद करेंगे।

34. इस संबंध में एक और प्रश्न उठता है कि क्या बैंक पूंजी पर बढ़ी हुई लागत को स्वयं वहन करेंगे या उसका बोझ जमाकर्ताओं और उधारकर्ताओं पर डालेंगे। इस तालमेल का आकलन भारतीय बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन (निम) के उच्चतर स्तर के अनुरूप किया जाना चाहिए जो 3 प्रतिशत के आस-पास है। इस उच्चतर निम से यह संकेत मिलता है कि बैंकों के लिए अपनी कार्य-दक्षता में सुधार करने, मध्यस्थीकरण पर आने वाली लागत को कम करने की गुंजाइश है। साथ ही, उन्हें यह देखना है कि पूंजी की लागत बढ़ने पर भी प्रतिलाभों के साथ-साथ अंधाधुंध तरीके से समझौता नहीं किया जाए।

35. पूंजी अपेक्षाओं पर चर्चा की जा चुकी है। आइए, अब हम बासेल-III के अंतर्गत चलनिधि मानकों पर आते हैं। क्या अधिक मात्रा में चलनिधिगत आस्तियों को बनाए रखने के अधिदेश (mandate) के कारण बैंक सरकार को उधार देने के निष्क्रिय विकल्प (passive option) को चुनने के लिए मज़बूर होंगे, जिससे निजी क्षेत्र बैंक ऋण से वंचित रह जाएगा? आशा करता हूँ कि अर्थव्यवस्था की बचत दर में सुधार होने के साथ-साथ राजकोषीय घाटा कम हो जाने से इस मुद्दे का समाधान खुद-ब-खुद हो जाएगा।

36. इस संबंध में एक सवाल पूछा जाता है कि बैंक सरकारी प्रतिभूतियों को किस सीमा तक अपने पास रख सकते हैं जिन्हें चलनिधि मानकों के अनुपालन के मूल्यांकन हेतु हिसाब में लिया जाए। इसके प्रति एक मत है कि चूंकि सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) संबंधी प्रतिभूतियों को निरंतर आधार पर रखना होता है, अतः उन्हें बासेल-III के अंतर्गत पूंजी अपेक्षाओं के गणनार्थ हिसाब में नहीं लिया जाना चाहिए। इसके विपरीत, एक और मत यह भी है कि चूंकि प्रतिकूल परिस्थितियों में रिज़र्व बैंक को अंतिम ऋणदाता (एलओएलआर) होने के नाते इन प्रतिभूतियों के एवज में चलनिधि उपलब्ध करानी होती है अतः कम-से-कम इन प्रतिभूतियों के निश्चित अंश को बासेल-III के चलनिधि मानकों के अनुपालनार्थ हिसाब में ले लेना चाहिए। रिज़र्व बैंक इस संबंध में यथासमय निर्णय लेगा।

37. इसलिए, क्या बासेल-III बैंकों की लाभप्रदता को प्रभावित कर उनकी प्रोत्साहन संरचना में बदलाव कर देगा, इस प्रश्न का उत्तर यह है कि हमारे बैंकिंग क्षेत्र के प्रतिस्पर्धात्मक पहलुओं से ऐसी स्थिति साकार होनी चाहिए जहाँ बैंक जमाकर्ताओं और उधारकर्ताओं के हितों से समझौता किए बिना प्रभावी ढंग से वित्तीय मध्यस्थता करने में समर्थ हो सकें।

छठा प्रश्न : क्या वास्तव में भारत को बासेल-III की आवश्यकता है? इसकी वजह से लाभों से कहीं अधिक लागत तो नहीं आएगी?

38. गौरतलब है कि अंतिम तीन प्रश्नों में बासेल-III के तथाकथित नकारात्मक परिणाम, यथा- अतिरिक्त पूंजी जुटाने के बोझ और चलनिधि संबंधी नए मानकों के अनुपालन पर आने वाली लागत, उससे बैंकों की लाभप्रदता पर पड़ने वाले प्रभाव तथा अर्थव्यवस्था की समग्र संवृद्धि की संभावनाओं आदि पर प्रकाश डाला गया है।

39. एक विचार, जिसे हालाँकि स्पष्ट रूप में व्यक्त नहीं किया गया है, यह भी है कि भारत को बासेल-III को अपनाने की ज़रूरत नहीं है, या उसे इसके परिष्कृत रूप में अपनाया जाना चाहिए ताकि लाभों और तथाकथित लागतों के बीच संतुलन स्थापित किया जा सके। इस विचार की यह दलील देते हुए पुष्टि की गई कि बासेल-III केवल उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से जुड़े ऐसे बैंकों के लिए एक सुधारात्मक उपाय के रूप में तैयार किया गया है जो अक्सर विनियामक खामियों और विनियामक शिथिलताओं का लाभ उठाते हुए बेकाबू हो गए हैं। जबकि भारतीय बैंकों, जो संकट के दौर में भी सुदृढ बने रहे थे, के लिए बासेल-III की 'बोझिल' अपेक्षाएं रखना ज़रूरी नहीं है।

40. रिज़र्व बैंक इस विचार से सहमत नहीं है। हमारा रुख यही है कि भारत को बासेल-III का मार्ग अपनाना चाहिए क्योंकि इसके पीछे कई कारण हैं। सबसे मुख्य कारण यह है कि भारत विश्व के अन्य देशों के साथ जुड़ा हुआ है। बड़े पैमाने पर भारतीय बैंक विदेशों में पदार्पण कर रहे हैं और विदेशी बैंक भी हमारे देश में अपनी उपस्थिति दर्ज करने लगे हैं, ऐसे में हम वैश्विक मानकों से विनियामक विचलन होने नहीं दे सकते। कोई भी विचलन हमें अवधारणात्मक और व्यावहारिक दोनों ही रूप में प्रभावित कर देगा।

41. निम्न मानक वाली विनियामक व्यवस्था की 'अवधारणा' रखने से भारतीय बैंक ऐसी स्थिति में वैश्विक होड़ में पिछड़ जाएंगे, विशेष रूप से जब बासेल-III के कार्यान्वयन में 'प्रतिस्पर्धी संस्थाओं' के कार्य-निष्पादन की समीक्षा की जाएगी और उसकी सूचना जनसाधारण को उपलब्ध कराई जाएगी।

42. बासेल-III से हट जाने से हम व्यावहारिक रूप से भी बाधित हो जाएंगे। हमें यह समझना होगा कि बासेल-III बैंकों में उन्नत जोखिम प्रबंधन प्रणालियों का मार्ग प्रशस्त करता है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि भारतीय बैंकों को बाहरी तंत्र से लगने वाले झटकों को झेलने के लिए इन जोखिम प्रबंधन प्रणालियों से रक्षा कवच प्राप्त होगा। यह उस स्थिति में काम आएगा जब वे वैश्विक वित्तीय प्रणाली के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित करते हों।

43. ज्ञात हो कि जब मैं इस प्रश्न का उत्तर पूरा करूँगा तो उसके पहले बासेल-III के निर्देश भारत में लागू हो चुके होंगे और इसके बोझ का असर उतना नहीं होगा जितनी हमने कल्पना की है।

सातवां प्रश्न : रिज़र्व बैंक ने बासेल-III के कार्यान्वयन की शुरुआत कर दी है, किंतु कुछ देशों ने यह कार्य अभी तक आरंभ नहीं किया है। आप इस दिशा में क्यों अग्रणी बनना चाहते हैं और क्यों आपके कुछ विनियम बासेल-III के अंतर्गत विनिर्दिष्ट अपेक्षाओं से भी बोझिल है?

44. रिज़र्व बैंक ने मई 2012 में बासेल-III पूंजी विनियमन के अंतिम दिशा-निर्देश जारी किए, जिन्हें 1 जनवरी 2013 से 31 मार्च 2018 तक लागू किया जाना है, किंतु कुछ देशों ने तो अभी तक इस कार्य को शुरू भी नहीं किया है। हम पर इस संबंध में ज़रूरत से ज्यादा सक्रिय होने की आलोचना की जा रही है। इस आलोचना का मैं उत्तर दूँगा।

45. पहला, आरंभ और समाप्ति की तारीखें। हमने आरंभ की तारीख को पहले नहीं खिसकाया है। इसे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सहमत तारीख, अर्थात् 1 जनवरी 2013 ही रखा गया है। किंतु हमने समाप्ति की तारीख को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित तारीख, अर्थात् 31 दिसंबर 2018 से नौ माह की अवधि कम करके 31 मार्च 2018 कर दिया है। हमने भारत के वित्त वर्ष की समाप्ति तारीख, जो कि 31 मार्च है, को ध्यान में रखते हुए इसे तय किया है। यदि हम इसे 31 मार्च 2019 तक आगे बढ़ाते हैं तो बासेल-III में विनिर्दिष्ट तारीख से तीन माह और बढ़ जाएंगे तथा ऐसा करने से हमारी छवि पर गलत असर पड़ सकता है। हमने यह उचित समझा कि इस प्रकार हमारी छवि पर गलत असर पड़ने से बेहतर है कि समाप्ति तारीख को नौ माह पहले कर दें। इसलिए हमने 31 मार्च 2018 को चुना है।

46. तीसरा, विश्व के प्रमुख बैंक अक्सर बासेल समिति की परामर्श प्रक्रिया में शामिल हो जाते हैं किंतु भारतीय बैंकों की स्थिति ऐसी नहीं है। हमने इस परामर्श प्रक्रिया को पूरा कर लिया है, अतः हम आगे बढ़ गए। इसलिए हमने यह सोचा कि क्यों न हमारे बैंकों को बासेल-III के पथ पर आगे बढ़ने के लिए पहले से ही तैयार किया जाए।

47. अब मैं इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर प्रकाश डालूँगा कि क्यों रिज़र्व बैंक ने भारतीय बैंकों के लिए बासेल-III में बताई गई न्यूनतम अपेक्षा से कहीं अधिक पूंजी और लीवरेज मानदंड विनिर्दिष्ट किए हैं। सारणी-4 में बासेल-III (अंतरराष्ट्रीय) में विनिर्दिष्ट मानकों, साथ ही, बासेल-II के अंतर्गत भारत में मौजूदा अपेक्षाओं और बासेल-III के अंतर्गत विनिर्दिष्ट अपेक्षाओं, जब इन्हें पूरी तरह लागू कर दिया जाएगा, को सार रूप में दर्शाया गया है।

48. हमारे 'बोझिल' पूंजी मानकों को कैसे न्यायसंगत ठहराया जा सकता है? ध्यान रहे कि भारत में स्थित बैंक बासेल-II के अंतर्गत मानकीकृत दृष्टिकोण का पालन करते हैं। पूंजी पर्याप्तता में निर्णयात्मक त्रुटियों, जैसे- मानकीकृत जोखिम भारों का गलत प्रयोग, आस्ति की गुणवत्ता का गलत वर्गीकरण आदि, को दूर करने की दृष्टि से उच्चतर

सारणी 4 : न्यूनतम विनियामक पूंजी का विनिर्दिष्ट स्तर (जोखिम भारित आस्तियों के प्रतिशत के रूप में)

		बासेल-III (1 जनवरी 2019 की स्थिति के अनुसार)	रिज़र्व बैंक द्वारा विनिर्दिष्ट स्तर	
			मौजूदा (बासेल-II)	बासेल-III (31 मार्च 2018 की स्थिति के अनुसार)
क=(ख+घ)	न्यूनतम कुल पूंजी	8.0	9.0	9.0
ख	न्यूनतम टियर-1 पूंजी	6.0	6.0	7.0
ग	जिसमें से :			
	न्यूनतम सामान्य इक्विटी टियर-1 पूंजी	4.5	3.6[3]	5.5
घ	अधिकतम टियर-2 पूंजी (कुल पूंजी के अंतर्गत)	2.0	3.0	2.0
ङ	पूंजी संरक्षण बफर (सीसीबी)	2.5	-	2.5
च = ग+ङ	न्यूनतम सामान्य इक्विटी टियर-1 पूंजी+सीसीबी	7.0	3.6	8.0
छ = क+ङ	न्यूनतम कुल पूंजी+सीसीबी	10.5	-	11.5
ज	लीवरेज अनुपात (कुल आस्तियों की तुलना में अनुपात)	3.0	-	4.5[4]

पूंजी विनिर्दिष्ट की गई है। इसके अलावा, बासेल-II के अंतर्गत उन्नत दृष्टिकोण को मज़बूत किया गया है, तथापि, मानकीकृत जोखिम भारों के कैलिब्रेशन को व्यापक रूप से लागू नहीं किया गया है। और मुख्य बात यह है कि अब तक भारतीय बैंकों को बासेल-II के दूसरे स्तंभ की पूंजी अपेक्षाओं के अधीन नहीं लाया गया है। इस प्रकार उच्चतर पूंजी की अपेक्षा से जोखिम वाले एक्सपोज़रों के अवपूंजीकरण (under-capitalization) की संभाव्य चिंताएं दूर होंगी। इस परिप्रेक्ष्य में यह ज्ञात हो कि रिज़र्व बैंक ने बासेल-। और बासेल-II व्यवस्था के अंतर्गत भी अंतरराष्ट्रीय मानकों की तुलना में एक प्रतिशत अधिक अपेक्षा निर्धारित की थी। हमें प्राप्त अनुभवों से यह पता चला है कि हमारा यह पूर्वविचार सहायक सिद्ध हुआ और यह लागत-लाभ की कसौटी पर खरा उतरा है।

49. कृपया यह भी ध्यान रखा जाए कि भारत उच्चतर पूंजी मानकों को निर्धारित करने वाला एक मात्र देश नहीं है। अन्य देशों, विशेष रूप से एशियाई देशों, ने भी बासेल-III के अंतर्गत उच्चतर पूंजी पर्याप्तता अनुपात का प्रस्ताव रखा है जिसे नीचे सारणी-5 में देखा जा सकता है।

50. इसी प्रकार एक और प्रश्न यह भी उठाया जाता है कि क्यों रिज़र्व बैंक ने 4.5 प्रतिशत का उच्चतर लीवरेज अनुपात विनिर्दिष्ट किया है, जबकि बासेल-III के मानदंड में 3 प्रतिशत का अनुपात विनिर्दिष्ट किया गया है। यह एक पर्यवेक्षी सहजता का मामला है जहाँ भारतीय बैंकिंग प्रणाली में लीवरेज एग्रीगेट आधार पर अल्प स्तर पर ही है (लगभग टियर-1 पूंजी का 22 गुना)। हमने लीवरेज अनुपात के समांतर चलन अवधि में इस 'सहज' स्तर को कम करना ठीक नहीं समझा। बासेल समिति लीवरेज अनुपात के संभावित प्रभाव की निगरानी और विश्लेषण कर रही है। बासेल-III संबंधी हमारे ढांचे में बताए अनुसार हम बासेल समिति के अंतिम प्रस्ताव को ध्यान में रखकर लीवरेज अनुपात की अपेक्षा तय करेंगे।

सारणी 5 : भारत की तुलना में अन्य देशों के नमूने जिन्होंने उच्चतर पूंजी पर्याप्तता मानदंड निर्धारित किए हैं :

देश	न्यूनतम सामान्य इक्विटी अनुपात (पूंजी संरक्षण बफर सहित) (प्रतिशत)	न्यूनतम कुल पूंजी अनुपात (प्रतिशत)
बासेल-III	7.0	10.5
भारत	8.0	11.5
फिलीपींस	8.5	12.5
सिंगापुर	9.0	12.5
चीन	7.5	10.5
दक्षिण अफ्रीका	9.0	12.5

[3] न्यूनतम सामान्य इक्विटी संबंधी कोई अपेक्षा विनिर्दिष्ट नहीं की गई है। किंतु टियर-1 में गैर-सामान्य इक्विटी अंश टियर-1 पूंजी के 40 प्रतिशत से अधिक न हो। तदनुसार, परोक्ष रूप में यह माना जा सकता है कि न्यूनतम सामान्य इक्विटी टियर-1 पूंजी के 3.6 प्रतिशत के बराबर है।

[4] दिनांक 1 जनवरी 2013 से 1 जनवरी 2017 तक की टियर-1 लीवरेज अनुपात की समांतर चलन अवधि में बैंकों को लीवरेज अनुपात के मौजूदा स्तर को बनाए रखने का प्रयास करना चाहिए, जबकि किसी भी दशा में यह 4.5 प्रतिशत से कम न हो जाए। ऐसे बैंकों को लक्ष्य की प्राप्ति शीघ्रातिशीघ्र कर लेनी चाहिए जिनका लीवरेज अनुपात 4.5 प्रतिशत से कम है। इस समांतर चलन अवधि में बासेल-III के अंतर्गत न्यूनतम टियर-1 लीवरेज 3 प्रतिशत होना चाहिए।

आठवां प्रश्न : प्रतिचक्रीय पूंजी बफर को लागू करने से संभावित चुनौतियां पैदा हो सकती हैं?

51. जैसा कि हमने पहले भी चर्चा की है कि बासेल-III पैकेज का एक महत्त्वपूर्ण घटक ऐसा प्रतिचक्रीय पूंजी बफर है जो बैंकों के लिए अच्छे समय में अधिक मात्रा में पूंजी जुटाने की अपेक्षा रखता है तथा आर्थिक संकुचन, सुरक्षा और सुदृढ़ता की आवश्यकताओं को पूरा करने में काम आता है। सैद्धांतिक रूप से यह सही लगता है, किंतु परिचालन की दृष्टि से यह चुनौतीपूर्ण है। हाल में स्पेन को इसका कटु अनुभव प्राप्त हुआ है। सबसे चुनौती भरा कार्य है आर्थिक चक्र में उस मोड़ का पता लगाना जब बफर का प्रयोग किया जाना ज़रूरी होता है। जाहिर है कि समष्टि-आर्थिक परिस्थितियों में समय-पूर्व या समय के बाद अंकुश लगाना काफी नुकसानदेह साबित हो सकता है। अतः इस मोड़ की पहचान वस्तुनिष्ठ और सुस्पष्ट मानदंड के आधार पर की जानी चाहिए। इसके लिए आर्थिक चक्रों से संबंधित कई क्रमबद्ध आंकड़ों की ज़रूरत पड़ सकती है। अतः हमारे पास एक उन्नत डेटाबेस होना चाहिए और इसके लिए आर्थिक चक्रों का विश्लेषण करने के लिए सुपरिष्कृत सांख्यिकीय कौशल भी ज़रूरी है।

52. बासेल-III में विनिर्दिष्ट प्रतिचक्रीय पूंजी बफर शुरू में ऋण/जीडीपी मेट्रिक पर आधारित था। क्या यह भारतीय परिप्रेक्ष्य में अच्छा आर्थिक संकेतक है? रिज़र्व बैंक द्वारा कराए गए अध्ययन से यह पता चला कि ऋण और जीडीपी अनुपात हमारी बैंकिंग प्रणाली में प्रणालीगत जोखिम के पैदा होने के संबंध में कभी भी अच्छा संकेतक साबित नहीं हुआ है।

53. इसके अलावा, रियल एस्टेट, आवास, सूक्ष्म वित्त और उपभोक्ता ऋण जैसे आर्थिक क्षेत्र भारत के लिए अपेक्षाकृत नई अवधारणा हैं तथा हाल ही में बैंकों ने इन क्षेत्रों को बड़े पैमाने पर वित्तपोषित करने का कार्य शुरू किया है। इन क्षेत्रों में पैदा होने वाले जोखिमों का कुल ऋण और जीडीपी अनुपात से ठीक तरह से पता नहीं लगाया जा सकता। रिज़र्व बैंक ने अब तक संपूर्ण क्षेत्र को ध्यान में रखते हुए प्रतिचक्रीय नीतियां विनिर्दिष्ट की हैं और मेरा विचार है कि हमें यही दृष्टिकोण जारी रखना चाहिए। अब बासेल समिति ने यह भी पाया है कि ऐसा कोई तत्व है नहीं जो आर्थिक चक्र की गतिशीलता का पूरी तरह पता लगा सकता हो। समुचित रूप से बफर की जांच करने के लिए देश-विशेष की धारणा आवश्यक होती है जिसमें वित्तीय स्थिरता के मूल्यांकनों में प्रयुक्त अन्य सहज संकेतक भी बड़े पैमाने पर काम आते हैं।

नौवां प्रश्न : डी-एसआईबी क्या हैं? क्या किसी भारतीय बैंक को डी-एसआईबी की श्रेणी में वर्गीकृत किया जाएगा?

54. संकट के बाद टू-बिग-टु-फेल संस्थाओं से जुड़ा नैतिक जोखिम बहुचर्चित मुद्दा बन गया है। यह अवधारणा बड़े-बड़े बैंकों को जोखिम से भरे कदम उठाने के लिए मज़बूर करती है। बासेल-III इस अवधारणा से बचाने के लिए सारे विश्व में प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण बैंकों (जी-एसआईबी) की पहचान करने की अपेक्षा करता है और वह प्रणालीगत रूप से उनके महत्त्व के स्तर के अनुरूप अधिक/कम मात्रा में पूंजी रखने की शर्त रखता है। वार्षिक अंतराल पर इन जी-एसआईबी की सूची की समीक्षा की जानी है। वर्तमान में ऐसा कोई भारतीय बैंक नहीं है जो जी-एसआईबी की सूची में शामिल है।

55. बासेल समिति देश के स्तर पर प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण बैंकों (डी-एसआईबी) के लिए कतिपय सिद्धांत और उनके संबंध में उच्चतर हानि की भरपाई (एचएलए) संबंधी पूंजी मानकों के लिए मानदंड तैयार करने की दिशा में अलग से कार्य कर रही है। इसके अलावा, डी-एसआईबी के लिए एक सुदृढ़ समाधान तंत्र विकसित करना बेहद ज़रूरी है।

56. टू-बिग-टु-फेल अवधारणा से उत्पन्न नैतिक जोखिम के मुद्दे और उससे निपटने के लिए किए जाने वाले विनियामक प्रयासों की वजह से यह सवाल उठ गया है कि अर्थव्यवस्था के आकार की तुलना में जी-एसआईबी और डी-एसआईबी का आकार कैसा होना चाहिए। यह सर्वविदित है कि परिचालन में किफायत की दृष्टि से बड़े-बड़े बैंक लाभकारी होते हैं और वे बुनियादी संरचना की बड़ी-बड़ी परियोजनाओं, जिन्हें अक्सर काफी जोखिमपूर्ण समझा जाता है, को वित्तपोषित करने की क्षमता रखते हैं। भारत के परिप्रेक्ष्य में हमें भी ऐसे बड़े बैंकों की ज़रूरत है जो विश्वस्तरीय भागीदार बनने की क्षमता रखते हों। खैर, हमें बड़े बैंकों से मिलने वाले लाभों और उनसे पैदा होने वाले नैतिक जोखिम की लागतों के बीच संतुलन स्थापित करना चाहिए।

दसवां प्रश्न : बासेल-III को लागू करने में, विशेष रूप से जोखिम प्रबंधन के क्षेत्र में किस तरीके से क्षमता निर्माण की ज़रूरत होगी ? बैंकों को क्या कदम उठाना चाहिए और रिज़र्व बैंक को इस दिशा में क्या कार्रवाई करनी चाहिए?

57. इसमें कोई दो राय नहीं है कि बैंकों में आंतरिक रूप से क्षमता निर्माण करना ज़रूरी है, और साथ ही, रिज़र्व बैंक को एक विनियामक होने के नाते बासेल-III को कारगर ढंग से लागू करना है।

58. बैंकों को अपने जोखिम प्रबंधन दृष्टिकोण में आमूलचूल परिवर्तन करना चाहिए, यही सबसे महत्त्वपूर्ण सुधार है। भारत में स्थित बैंक वर्तमान में बासेल-II के मानकीकृत दृष्टिकोण के अनुसार कार्य कर रहे हैं। बड़े आकार के बैंकों, खास तौर पर विदेशों में संचालित बैंकों को, उन्नत दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। जोखिम प्रबंधन के उन्नत दृष्टिकोण अपनाने से बैंक प्रभावी तरीके से अपनी पूंजी का प्रबंध कर पाएंगे और उनकी लाभप्रदता में सुधार आएगा।

59. इस प्रकार उन्नत दृष्टिकोण को अपनाने के लिए तीन बातें ज़रूरी हो जाती हैं। पहली और सबसे अहम् बात है पूंजी के ढांचे को मात्र एक खानापूर्ति के रूप में देखने के हमारे नज़रिये में बदलाव आना चाहिए। अपितु, उसे बैंक को सुदृढ़, स्थिर रखने के लिए एक ऐसी पूर्व-शर्त के रूप में देखना चाहिए, जिसके परिणामस्वरूप लाभप्रदता हासिल की जा सकती है; दूसरी बात है जोखिम प्रबंधन के प्रति हमारी क्षमता प्रभावी व बहुमुखी हो; और आखिरी बात यह है कि आंकड़े पर्याप्त रूप में उपलब्ध हों और वे उच्चकोटि के हों।

निष्कर्ष

60. मेरे दस प्रश्नों की सूची और उनके उत्तर यहाँ आकर खत्म हो गए। मैंने इन पर विस्तार से चर्चा करने की चेष्टा की है, लेकिन जानता हूँ कि मेरे प्रश्नों की यह सूची न तो व्यापक है; न ही इनके प्रति मेरे उत्तर संपूर्ण। खैर, यदि मेरा यह भाषण कई सवाल खड़ा करता है और आप में उनके जवाब ढूँढ़ने की उत्सुकता जगाता है तो मैं इसे सार्थक समझूँगा।

61. कई अनुत्तरित प्रश्न हो सकते हैं। किंतु मुझे पूरा विश्वास है कि बासेल-III को कारगर ढंग से लागू करने से भारतीय बैंक और मज़बूत, स्थिर तथा दुरुस्त हो जाएंगे। इससे वे अर्थव्यवस्था के वास्तविक क्षेत्र (रियल सेक्टर) को बढ़ावा देने में सक्षम हो सकेंगे।

62. इन शब्दों के साथ मैं इस सम्मेलन की सफलता की कामना करता हूँ जिसमें द्वि-अंकी संवृद्धि हासिल करने के हमारे राष्ट्रीय ध्येय को पूरा करने में भारतीय बैंकों की भूमिका पर विचार-विमर्श किया जा रहा है।